International Journal of Hindi Research
ISSN: 2455-2232, Impact Factor: RJIF 5.22
www.hindijournal.com
Volume 3; Issue 1; January 2017; Page No. 78-79

परिवार : पुरुषवादी नीति और स्त्री-दमन का प्रारंभिक चरण

डॉ0 ममता धवन

सहायक प्रवक्ता, मैत्रेयी कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्याल, नई दिल्ली, भारत

प्रस्तावना

परिवार एक ऐसी इकाई है जिसमें व्यक्ति की सहज मनोवृतियाँ अपने घनीभूत रूप में फलती-फूलती हैं किन्तु परिवार की यह सामान्य अवधारणा स्त्री के सन्दर्भ में प्रस्तुत नहीं की जा सकती. स्त्री अपनी बुद्धि से कोई भी कार्य स्वयं करने के लिए स्वतंत्र नहीं है. यहाँ तक कि उसके निजी जीवन से सम्बंधित सभी महत्त्वपूर्ण निर्णय भी परिवार का पुरुष सदस्य ही लेता है. परिणाम स्वरुप अपने जीवन को लेकर स्त्री की अपनी आकांक्षाओं और इच्छाओं का दमन हो जाता है. इस सन्दर्भ में 'हिंदी नाटकों में मध्य वर्गीय चेतना' के पृष्ठ संख्या ८ में डॉ. वीणा गौतम लिखती हैं – "व्यक्तिगत भावनाओं का दमन स्त्री के विकसित होते व्यक्तित्व को न केवल कुंठित कर देता है बल्कि उसके चिंतन पर भी अंकुश लगा देता है."

यदि कहा जाए कि स्त्री व्यक्तित्व विघटन की प्रक्रिया यहीं से शुरू होती है तो कोई अतिशियोक्ति न होगी. घर की बहु बेटियां घर से बाहर जाने तक में घर के पुरुष सदस्यों की इच्छा और आज्ञा की मोहताज हैं. उनके जीवन के क्रिया कलापों, इच्छाओं, आकांक्षाओं पर घर के मुख्य पुरुष की मोहर लगना आवश्यक है. स्त्री-विमर्श में बहुचर्चित किताब 'स्त्री उपेक्षिता' में सिमोन स्पष्ट शब्दों में कहतीं है –"स्त्री पैदा नहीं होती बना दी जाती है." लड़की को वह सामान्य से अधिकार भी नहीं दिए जाते जो घर के लड़के को सहज ही उपलब्ध हैं. स्त्री परम्परा और आधुनिकता (पृष्ठ७६) में राजकिशोर लिखते हैं- " लड़कियों को खेलने के लिए लट्टू नहीं दिए जाते , गलियों में गिल्ली डंडा व् कंचा वह खेल नहीं सकतीं, घर की छत पर पतंग नहीं उड़ा सकती. खेल के सामान में यह अलगाव उसके भविष्य की नींव तैयार करता है."

मार्क्स ने परिवार में स्त्री को मात्र एक उत्पादन-कर्ता का नाम दिया है. क्योंकि उत्पादक जो उत्पादन करता है वह वास्तव में उसका नहीं होता. उत्पादक स्वयं द्वारा उत्पादित वस्तुओं पर दूसरे व्यक्ति के स्वामित्व को सहन करता है. इसी तरह प्रजनन भी एक श्रम है, उत्पादन है. पुरुष स्त्री के पुनरुत्पादन सम्बन्धी श्रम का शोषण कर उसे कमज़ोर बनाता है और साथ ही उस उत्पादन पर अपने वंश की मोहर लगाकर स्त्री के वंश को समाप्त भी करता है. विस्तार के लिए द्रष्टव्य है – 'सोशल एंड इकनोमिक आर्गेनाइजेशन' – मैक्स बेबर पृष्ठ २० जिसमें कहा गया है – "संतान पैदा करने का श्रम स्त्री करती है किन्तु वंश पुरुष के नाम से चलता है. संतान पिता की परंपरा एवं इतिहास का बोझ ढोने के लिए बाध्य है."

यह एक मिथक है कि भारतीय परिवार अपने सदस्यों को हमेशा सुरक्षा प्रदान करता है. इसका दूसरा पहलू है कि परिवार जब विफल होता है तो स्त्री और बच्चे ही इसके यातना भोगते हैं. 'क्रांति चेतना के नए रूप में' (पृष्ठ २०४) प्रभा खेतान लिखती हैं- "यह एक ऐसा तिलिस्म है जिस से आज भी अधिकतर स्त्रियाँ बाहर नहीं निकल सकीं हैं. पुरुष आज भी अपने बच्चों को स्वीकारने या खारिज करने के लिए स्वतंत्र हैं. स्त्री बच्चे को न खारिज कर सकती है न मुक्ति पा सकती है. इस तरह वह पुरुष के नैरन्तर्य को ढोने के लिए अभिशप्त हो जाती है." दूसरी तरफ पारिवारिक और सामाजिक दबाव एवं उपेक्षा से बचने के लिए माता- पिता भी अपने परिवार की विधवा तलाकशुदा परित्यक्ता का बहिष्कार कर देते हैं. आर्थिक सुरक्षा तथा सामाजिक हैसियत से भी उन्हें वंचित कर दिया जाता है. अपने माता-पिता, पति के परिवार से कोई सहारा न मिलने के कारण कई स्त्रियां वेश्यावृति करने तक के लिए अभिशप्त हो जातीं हैं. अन्य कोई भी साधन पुरुष वर्ग उन्हें नहीं सौंपता क्यूंकि पुरुष का एक ही ट्रैक है – स्त्री तक पहुँच और उसपर नियंत्रण.

परिवार को आगे बढाने के लिए वैवाहिक संस्था बनाई गयी. यह वैवाहिक संस्था वास्तव में पुरुष वर्चस्ववादी नीति को पुष्ट करती है. पुरुष जो कि इस वैवाहिक संस्था का नियंता और नियामक है कई बार स्त्री पर हावी होने के लिए हिंसा के प्रयोग को भी अनुचित नहीं समझता. जॉन स्टुअर्ट मिल की पुस्तक "द सब्जेक्शन ऑफ़ वीमेन" के हिंदी अनुवाद 'स्त्री और पराधीनता' जो कि युगांक धीर द्वारा किया गया है(पृष्ठ ४७) में दर्ज है – "परिवार आपसी स्नेह, सहानुभूति और स्वार्थ रहित सद्भाव की पाठशाळा है- तो अपने निकृष्टतम रूप में, अपने मुखिया के चरित्र के अनुसार, यह मनमानेपन, हावीपन, अमर्यादित आत्मप्रेम और आदर्श मंडित स्वार्थता की भी एक पाठशाला है. ऐसे परिवार में पत्नी और बच्चों की देखभाल करने का असली मकसद होता है अपने हितों और संपत्तियों की रक्षा करना,जबकि उनकी हर व्यक्तिगत ख़ुशी मुखिया की रूचि और अहम् तले कुचली जाती रहती है."

वस्तुतः भारतीय समाज में वैवाहिक संस्था को व्यभिचार पर अंकुश लगाने तथा स्त्री और पुरुष के नैतिक चरित्र का विकास करने के उद्देश्य से विशेष महत्व दिया जाता रहा है. वैवाहिक संस्था का प्रारंभ करने वाले उद्धात्मक ऋषि के पुत्र श्वेतकेतु ने पक्षपात रहित होकर पत्नी को पतिव्रत और पति को पत्नीव्रत बनकर एक दूसरे के प्रति आजीवन समर्पित रहने की शिक्षा दी तथा समाज का मार्ग दर्शन किया. किन्तु परम्पराओं और वैवाहिक रुढियों के बढ़ते चलन के फलस्वरूप इस बंधन को स्त्री पक्ष के लिए कठोर बनाने का प्रयास समय के साथ-साथ किया जाता रहा. पति को परमेश्वर के रूप में व्याख्यायित किया गया और पत्नी को परिचालिका व् सेविका के रूप में. सेवा करने से स्त्री का लोक ही नहीं परलोक भी सुधर जाता है. भारतीय संस्कृति के इस प्रमुख विधान पर व्यंग्य करते हुए 'सिमंतनी उपदेश' पृष्ठ:९ में लिखा गया है- "पति ही देवता है. पति ही का ध्यान करो.पति ही की पूजा, पति ही का भजन. स्त्रियों के वास्ते पति ही परमेश्वर है और दूसरा कोई नहीं. जो स्त्री सिवा पति के दूसरा परमेश्वर जानती है वह इस दुनिया में बड़ा दुःख और परलोक में नर्क पाती है."

भारतीय समाज में विवाह स्त्रियों को जकड़ने, उनके अधिकारों, मनोवांछित भावों और इच्छाओं का दमन करने एवं पुरुष आश्रित बनाए रखने की उदात्त संस्था है. इस संस्था का विधान है कि वर अपेक्षाकृत अधिक वयस्क, अधिक बुद्धिमान तथा अधिक पढ़ा-लिखा हो. समान उम्र, समान योग्यता, तथा समान मानसिक स्तर का यहाँ कोई स्थान नहीं. वधू चुनाव का यह दृष्टिकोण स्त्री के वैवाहिक दमन की कोठरी का दरवाज़ा खोलता है. विवाहोपरांत पुरुष स्त्री-सहयोग और पारिवारिक निश्चिन्तता के परिणाम स्वरुप और अधिक विकसित होता है; उसकी गुणात्मकता में धनात्मक परिवर्तन आता है किन्तु स्त्री घरेलू कार्यों को निबटाने में लगी रहने के लिए विवश है. पुरुष के शासन और जबरदस्ती को सहन करना उसकी नियति की विडंबना है. इस विडंबना की वह केवल शिकायत ही कर सकती है विद्रोह नहीं. इसके पीछे के कारण को सपष्ट करते हुए 'द सब्जेकशन ऑफ़ वीमेन' में जॉन स्टुअर्ट कहते हैं- "किसी भी दूसरे मामले में (बच्चे के मामले को छोड़कर) यातना की शिकायत करने वाले को यातना देने वाले के संरक्षण में नहीं छोड़ा जाता पर इस मामले में यही होता है इसलिए ज्यादातर स्त्रियों पर ज्यादतियां और ज्यादा बढ़ जाने की पूरी सम्भावना रहती है."

पुरुष मानसिकता ने पति-पत्नी के बीच मालिक-गुलाम, शोषक-शोषित सम्बन्ध स्थापित कर वैवाहिक-संस्था का अवमूल्यन कर दिया है. पत्नी में इच्छा-शक्ति का अभाव, अपनी भावनाओं पर नियंत्रण, पुरुषसत्ता के आगे समर्पण, और दूसरों के नियंत्रण अनुसार चलने और जीने वाले आचरण की अपेक्षा की जाती है. इस आचरण को न मानने वाली स्त्री ही पुरुष समाज में चरित्रहीन है. पुरूष अपनी पत्नी को गुलाम नहीं बल्कि एक पसंदीदा गुलाम की तरह रखना चाहता है. जॉन स्टुअर्ट मिल भी अपनी पुस्तक 'द सब्जेकशन ऑफ़ वीमेन' में पृष्ठ २५, कहते हैं- "व्यावहारिक सच्चाई यह है कि पत्नी अभी भी अपने पति की बंधुआ सेविका ही है, उसमें और किसी गुलाम में कोई बुनियादी फरक नहीं है. वह विवाह के समय जीवन भर आज्ञा पालन का वचन देती है और जीवन भर इस बंधन से बंधी रहती है."